स्तोत्र-द्वयी

संकलन

श्री श्रीनाथजी भट

संपादक

श्री वारणासि राममूर्ति 'रेणु'

प्रकाशक

श्री के० रामचन्द्रय्या
विद्यार्थी पब्लिकेशन्स
हैदराबाद आं० प्र०

स्तोत्र-द्वयी

संकलन

श्री श्रीनाथजी भट

संपादक

श्री वारणासि राममूर्ति 'रेणु'

प्रकाशक

श्री के० रामचन्द्रय्या
विद्यार्थी पब्लिकेशन्स
हैदराबाद आं० प्र०

प्रथम संस्करण 1972

मूल्य : अमूल्य

मुद्रक
दक्षिण भारत प्रेस
हैदराबाद

आभार-प्रदर्शन



हमारे नानाजी श्रीनाथ जी भट्ट द्वारा संकलित इस अमूल्य साहित्यिक धरोहर का संपादन मेरे श्रद्धेय मित्र श्री राममूर्ति 'रेणु' जी ने किया है। अतः उनके प्रति यह हृदय आभारी है।

मित्रवर श्री केटिके रामचंद्रय्या ने इस पुस्तक को सुंदर ढंग से छपा दिया है। उनके प्रति मैं सदैव कृतज्ञ रहूँगा।

कनाड हाऊस
लालबहादुर स्टेडियम्
हैदराबाद (आं० प्र०)
&
श्रीनगर, काश्मीर।

विनीत
अवतार कृष्ण कौल



संकलयिता :

श्री श्रीनाथजी भट

ॐ

काश्मीर के संत–विद्वान्

श्रीनाथजी भट्ट



प्रस्तुत स्तोत्र-द्वयी के संकलनकर्ता श्री नाथ जी भटने एक गरीब किन्तु गुणाढच भरद्वाज गोत्री कश्मीर ब्राह्मण परिवार में जन्म पाया था और सहस्रमास की (८४ वर्ष) संपूर्ण आयु व्यतीत कर आज से १५ वर्ष पूर्व ता. ६–१२–१९५६ को कैलासवासी हो गये थे। आपका जीवन प्रारंभ से ही स्वच्छ सादा और पवित्र रहा था। बचपन ही में पिता श्री ऋषिभट्ट की स्निग्ध छत्रछाया से वंचित वह होनहार बालक, अपने मामा की देख-रेख में बडा हुआ। कश्मीरी शॉल वगैरह की एक छोटी सी दूकान खोल रखी। दैवयोग से व्यापार में दिन-दूनी रात-चौगुनी तरक्की होती गई।

यह कहना कठिन है, कि मनुष्य के ज़ीवन में कब, कहाँ और किस तरह का मोड आजाता है, जिसके कारण वह क्या से

क्या बन जाता है। जब दूकानदारी अच्छी चल रही थी, एक बार हरद्वार से एक सिद्ध महात्मा स्वामी तेजनाथ जी कश्मीर पहुँचे। उनसे साक्षात् होते ही श्रीनाथ जी के स्वभाव में अद्-भुत परिवर्तन हुया। स्वामी जी से दीक्षा ली। आज्ञान के अन्धकार में भटकने वाले को ज्ञानांजन मिल गया। मन की आँखें खुल गईं। लौकिक व्यापार की ओर से हट कर उनका मन पारलौकिक व्यापार की तरफ बढा। प्रवृत्तियों से ऊब कर निवृति-पथ-गामी बनने लगे। प्रारंभ में दिन में चार-पाँच घंटों तक ध्यान में लवलीन रहने लगे जो कि क्रमशः आठ, दस, और बारह घण्टों तक बढ गया। सच्चे कर्मयोगी की तरह अनासक्त व्यवसायात्मिका बुद्धि स दिन में अपना धंधा करते तो रातें भग-वान के ध्यान-चिंतन में बीत जाती थीं। मर्यादापुरुषोत्तम राम, लीलाधर श्रीकृष्ण और अवढर दानी भगवान शंकर तथा जग-दम्बा भवानी उनके आराध्य बने थे। बचपन में शास्त्राध्ययन वगैरह से अछूता रह गये थे। फिर भी गुरुकृपा-अंजन के प्राप्त होते ही धार्मिक-ग्रंथ स्तोत्र वगैरह स्वयं पढकर समझ लेने की योग्यता प्राप्त हो गई। यहाँ तक कि कठिन एवं जटिल से जटिल संस्कृत रचनाओं को भी भली भाँति समझ कर उन्हें औरों को समझा सकने की सामर्थ्य से अलंकृत होगये। स्वभाव से बड़ ही नम्र होने के कारण प्रदर्शन-लोलुपता से दूर रहते थे। साधुओं की संगत में बैठकर भगवत्कथाश्रवण में मगन रहते। किंतु यदि कहीं किसी ढोंगी अधकचरे कथावाचक ने अपने प्रव-चनों में, मूल संस्कृत रचनाओं का अर्थ करने में गडबडी कर दी

तो उनकी खबर लिए बिना नहीं रहते थे। और उस वक्त भी उनकी कोशिश यही होती थी, कि ऐसे दबंग पण्डितम्मन्यों के प्रभाव में आकर साधारण श्रोता गुमराह न हो जाएँ ! अर्थ का अनर्थ न समझें ! प्रकृति से बड़े ही उदार और दुनिया- दारी के प्रति उदास श्रीनाथ जी ने अपने जीवन के उत्तरार्द्ध का अधिकांश, स्वाध्याय एवं लेखन-कार्य में व्यतीत किया। अपने अनथक प्रयासों द्वारा संस्कृत भाषा के दर्जनों अनमोल स्तोत्र रचनाओं को संकलित किया। सैकडों की संख्या में भरे पडे उन श्लोकों का अन्वय, अपनी मातृभाषा कश्मीरी में सरल व सरस भावार्थ, आवश्यक प्रसंगों पर श्रुति, स्मृति एवं पुराणों से तुलनात्मक उद्धरण देकर उन्हें सबके लिए सुबोध बना दिया है। इस प्रकार संस्कृतज्ञ श्रद्धालु भक्तों का, विशेष कर कश्मी- रियों का बडा उपकार कर गये। अच्छे मोटे कागज पर सुवाच्य नागरी लिपि में लिखे गए उन विवरणात्मक स्तोत्रों की कई जिल्दें, उनके दौहित्र श्री अवतार कृष्ण कौल के संरक्षण में विद्यमान हैं। उनके प्रकाश में आने से आस्तिक समाज एवं संस्कृत साहित्य का बडा उपकार होगा।

इस संदर्भ में श्रीअवतारकृष्ण कौल के बारे में, जिनके सत् प्रयत्न से यह लघु-पुस्तिका प्रकाशित हो रही है, दो बातें लिखे बिना नहीं रहा जाता। श्री कौल, नाथजी के ज्योष्ठ दौहित्र हैं—स्वभाव से अत्यंत सरल, फिर भी गंभीर, मृदु तथा मधुर- भाषी। अपने नाना की ओर से इन्हें विरासत में मिले हैं—

निश्चल भक्ति-भावना, उदारता और दीन-दुखियों के प्रति समवेदना। अठाईस साल की उफनती जवानी में, इनके अंतर्मन में, परोक्ष रूप से लहरें मारने वाली वैराग्य भावना, उनके अंतरंग मित्रों को चक्कर में डाल देती है ! आधुनिक सुखभोग के सभी साधनों के प्रचुरमात्रा में उपलब्ध होने पर भी इनका संतमन उनकी तरफ से उदास रहता है और अपनी आराध्या भगवती जगदम्बा के सतत-चिंतन में लीन रहता है।

इस छोटी-सी पुस्तिका में संग्रहीत प्रथम 'स्तव' किन्हीं जगदरभट्ट की रचना है। उनके बारे में हमें कुछ भी ज्ञात नहीं होता है और न ही संकलनकर्ता श्रीनाथभट ने अपनी पांडुलिपि में कुछ बताया है। दोनों के नामों से ज्ञात होता है कि वे 'भट्ट' परिवार के रहे हैं। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि कवि संकलयिता के पूर्वपुरुष रहे होंगे।

श्लोक रचना पर विहंगम दृष्टि डालने से स्पष्ट होता है कि जगदरभट बड़े ही प्रौढ कवि रहे थे। भाव-सौंदर्य के साथ साथ, प्रौढ, प्रांजल, शब्दार्थालंकार-शोभित शैली, सोने में सुगंधि का योग देती है। उदाहरण के तौर पर ये श्लोक द्रष्टव्य हैं–

भानुना तुहिनभनुना बृहद्–
भानुनाच विनिर्वर्तितं न यत्
येन तज्झगिति शांतिमांतरं–
ध्वांतमेति तदुपास्महे महः ।। सं० ७

× × ×

अंबरेण गगनेन संवृतं
जीवनैः शिरसि वारिभिःश्रितम्
भोगिभिश्च भुजगैर्विभूषितं
शंकरं शुभकरं भजामहे ।। सं० २१

पावकेन शिखिनोपशोभित
भासितं सितरुचा हिमांशुना
भास्वताच रविणा विराजितं
लोचनत्रयमुपास्महे विभोः ।। सं० २२

श्री भटजी परमेश्वर के बडे अंतरंग भक्त हैं, यह तथ्य उनके प्रत्येक श्लोक से स्पष्ट होता है। हिमगिरितनया, हिमांशुलेखा आदि शीत-प्रधान वस्तुओं की शिशिरता से भयभीत शिवजी को वे अपने त्रिताप-तप्त हृदय में आकर बैठ जाने के लिए निमंत्रित करते हैं, जिससे कि भूतनाथ की ठण्ड से रक्षा हो सके!—साथ ही अपना उद्धार भी! वाह! कैसी विदग्ध-भणिति है! भक्ति का कैसा प्रौढ ज्ञापन है!

हिमगिरि तनया हिमांशुलेखा
सरिदति शीतलवाहिनी सुराणाम्
इति त्विभरति वेपथुश्च शंभो !
ममहृदये प्रविशत्रिताप-तप्ते !

और वह निराकार महेश्वर-ज्योति कैसी है ?

त्यक्तसर्वदशमक्षयोदयं
रूपवर्जितमभित्ति संश्रयम् ।
यन्निरंजन मनक्षिगोचरं
दीपमद्भुतमुशंति तं स्तुमः ।। सं० १२

विरोधाभास अलंकार का हृदयहारी विन्यास इन पंक्तियों में देखिये ।

आपतंतमयमं यमं परो
यःसविग्रहमविग्रहं व्यधात्
दर्पकं विधितयोप्यदर्पकं
तं विषादमविषादमाश्रये ।। सं० २०

चतुरानन ब्रह्मा कमलासन हैं । वे विष्णुजी की नाभि से निकले कमल की कर्णिका पर बैठते हैं । दूसरे स्तोत्र 'नमस्कार-स्तोत्र' के एक श्लोक में कवि ने ब्रह्म-स्वरूपी महेश्वर की वन्दना की है । यह ब्रह्मा किस कमल पर आसीन हैं ?——देखिये

कुलशैलदलं पूर्णसुवर्णगिरिकर्णिकम् ।
नमोऽधितिष्ठतेऽनन्तनालं कमलविष्टरम् ।। सं० १९

इस भूलोक रूपी अद्भुत कमल की पीली कर्णिका मेरु-पर्वत (स्वर्णगिरि) है ! वह अष्टदलपद्म है । आठ कुलपर्वत ही आठ दल हैं ! आदिशेषनाग ही उसका नाल है । उस पर आसीन रहते हैं ब्रह्म-रूपी महेश्वर ! कैसी विराट कल्पना है !

एक दूसरे श्लोक में भगवान शिवजी ही को त्रिमूर्ति-रूप मानकर उनकी वन्दना की गई है। इसमें 'विधु, 'विधि' शब्दों का भिन्न-भिन्न अर्थों में सुंदर प्रयोग किया गया है।

विधौ जगत्सर्गविधौ यदाहितं
प्रतिष्ठितं यत्स्थितिकारणे विधौ।
समूढगूढार्धविधौ लयेचयत्-
पराय तस्मै महसे नमोनमः॥ सं० २६

इस प्रकार इन दोनों स्तोत्रों का प्रत्येक श्लोक भक्ति एवं साहित्य की गंगाजमुनी छुटा लिए श्रद्धालु पाठकों के लिए शिरोधार्य बनी है। इसे संपादित कर भक्तों के सम्मुख रखने का सुअवसर देने के लिए मैं भाई श्री अवतार कृष्ण का आभार मानता हूँ।

होली (पूर्णिमा)
२९-२-१९७२
हैदराबाद आं. प्र.

भागवत चरणरेणु
वाराणसी राममूर्ति 'रेणु'

ॐ नमश्शिवाय



श्लो० हिमगिरि तनया हिमांशुलेखा

सरिदति शीतलवाहिनी सुराणाम् ।

इतित्रिभिरति वेपथुश्च शंभो !

ममहृदये प्रविश त्रितापतप्ते !



श्री जगद्धरभट्ट विरचिते भगवतो महेश्वरस्य स्तुतिकुसुमाञ्जलौ

स्तुति प्रस्तावः



श्लो॰ ह्लादवद्भिरमलैरनर्गलै-
जीवनैरघहरैर्नवैरियम् ।
स्वामिनः कल्मशमक्षमैः क्षणं
रोद्धुमर्हति मनःसरस्वती ॥१॥

स्वामिनःस्थिरगुणा सविक्रमा
कर्णयोरमृतवर्षिणीमनः ।
कर्तुमर्हति मुहूर्तमुज्झितं
स्वैरचापलमियं सरस्वती ॥२॥

रम्यरीतिरनघा गुणोज्वला
चारु वृत्तरुचिरा रसान्विता ।
रञ्जयत्वियमलंकृता मनः
स्वामिनः प्रणयिनी सरस्वती ॥३॥

सत्वधाम वरलाभ याचित
श्लाघ्यवर्ण विशदा विशत्वियम् ।
निर्मलं सघन कालविप्लवा
मानसं स्मरजितः सर वती ॥४॥

भक्तितः सपदि सर्वमङ्गला
बोधिता निजधियैव मेनया ।
आरिराधयिषतीश्वरंवरं
लब्धुमीप्सितमियं सरस्वती ॥५॥

ओमितिस्फुरदुरस्यनाहतं
गर्भगुम्फित समस्त वाङ्मयम् ।
दन्ध्वनीति हृदि यत्परं पदम्
तत्सदक्षरमुपास्महे महः ॥६॥

भानुना तुहिनभानुना बृहद्–
भानुनाच विनिवर्तितंनयत् ।

येन तज्झगिति शांतिमांतरं–
ध्वांतमेति तदुपास्महे महः ॥७॥

तथाहिः—न तत्र सूर्योभाति न चंद्रतारका
नेमाविद्युतो भांति कतोऽयमग्निः, तमेव
भांतमनुभांतिसर्वं, तस्यभासा सर्वमिदं
विभाति ॥इति श्रुतिः॥

कीचकादि कुहरेष्विवाम्बरं
बिम्बमम्बरमणेरिवोर्मिषु
एकमेवचिदचित्स्वनेकधा
यच्चकास्ति तदुपास्महे महः ॥८॥

तर्ककर्कशगिरामगोचरं
स्वानुभूति समयैकसाक्षिणम् ।
मीलिताखिल विकल्पविप्लवं
पारमेश्वरमुपास्महे महः ॥९॥

स्वावभासमयमेव मायया
ये न भिन्नमवभास्यते जगत् ।
चित्रमिन्द्रधनुरभ्रलेखया,
भास्वतेव तदुपास्महे महः ॥१०॥

युगलकम्—हृद्गुहागहनगेह गूहितं
भासिताखिल जगत्रयोदरम् ।
कन्द कन्दरदरी मुखोद्गत—
प्राणमारुत कृतस्थिरस्थितिम् ॥११॥

त्यक्तसर्वदशमक्षयोदयं
रूपवर्जितमभित्ति संश्रयम् ।
यन्निरंजनमनक्षिगोचरम्
दीपमद्भुतमुशन्ति तं स्तुमः ॥१२॥

य य शस्य महसोनिरर्गलं
योगमाप्य चरणाब्जरेणुभिः ।
अद्भुतां दधाति नीरजस्कतां
तं जगत्पतिमुमापतिं स्तुमः ॥१३॥

चारुचन्द्रकलयोपशोभितं
भोगिभिः सह गृहीत सौहृदम् ।
अभ्युपेतघनकालशात्रवं,
नीलकंठमति कौतुकं स्तुमः ॥१४॥

इच्छयैव भुवनानि भावयन्
यः प्रियोपकरण ग्रहोऽपिसन् ।

अप्रियोपकरण ग्रहोऽभवत्
तं स्वशक्तिसचवं [1]शिवं स्तुमः ॥१५॥

पद्मसद्मकरमर्दलालितं
पद्मनाभनयनाब्जपूजितम् ।
पद्मबंधुमकुटांशुरञ्जितं
पादपद्मयुगमैश्वरं स्तुमः ॥१६॥

अङ्घ्रियुग्ममरेशमस्तक-
स्त्रग्भिरुज्ज्वलमुरश्चभस्मभिः ।
शेखरंच हिमरश्मिरश्मिभि-
र्यो बिभर्ति तमुपास्महे विभुम् ॥१७॥

मूर्ध्निचन्द्रकरसुन्दरत्विषं
फेनपिण्डपरिपाण्डुरस्मिताम् ।
देहिनां वहति तापहारिणीम्
सिद्धसिंधुमतनुं तनुंचयः ॥१८॥

कर्तुमुत्सहतएव सेवको
यस्य कस्य न मनःस कौतुकम्
नैति शान्तनव विग्रहोऽपि सन्
भीष्मतां न च विचित्रवीर्यताम् ॥१९॥

---

1. सचिवं ?

आपतंतमयमंयमम् परो
यः सविग्रहमविग्रहं व्यधात् ।
दर्पकं विधितयोप्यदर्पकं
तं विषादमविषादमाश्रये ॥२०॥

अंबरेण गगनेन संवृतं
जीवनैः शिरसि वारिभिः श्रितम् ।
भोगिभिश्च भुजगैर्विभूषितम्
शंकरं शुभकरं भजामहे ॥२१॥

पावकेन शिखिनोपशोभितं
भासितं सितरुचाहिमांशुना ।
भास्वताच रविणाविराजितं
लोचनत्रयमुपास्महे विभोः ॥२२॥

अभयंकरमाश्रितं स्वरूपं
दधदुद्दामसमग्रधामयोगम् ।
शुचितारकमीश्वरस्य नेत्र-
त्रितयं शूलशिखात्रयं च वन्दे ! ॥२३॥

मीलद्विलोचन समुद्रसमुद्गताश्रु-
स्रोतः स्नातिस्नापित मूलकपोलभागाः

देवं शशांकशकलाकलितावतंसं
शंसंति संत इह शंकरशंकरेति ॥२४॥

श्रान्तोस्मि वैशसमये समयेऽहमत्र
मिथ्यैव दिग्भ्रमहतो महतोऽपमार्गान् ।
विश्रम्य नन्दनवनेनवने शिवस्य
खेदस्तु संप्रति समेति समेऽवसानम् ॥२५॥

यत्पार्वणेन्दुकरसुन्दर वाह हंस–
संवास दुर्ललितयापि वचोधिदेव्या
विश्रम्यते मनसि नः समले सलीलं
तत्सौभगं भगवतो जयतीन्दुमौलेः ॥२६॥

यं भूषयन्ति कमनीयमहीनभोगाः
स्तत्वा भवन्ति कतिनोयमहीनभोगाः ।
चित्तोचितं तमपहाय महीनभोगाः
कर्तुं परत्र धृतसंयमहीन भोगाः ॥२७॥

अवाप्यगुरुभिर्गुणैर्जगति गौरवं ध्यायत–
स्तमीरमणशेखरं भवति गौरवं ध्यायतः
अतस्तमुमयासमंकृतमहाविलासंतंप्रति,
स्तुती विरचिता मया मतिरनाविला संप्रति ॥२८॥

मत्वा सद्यः सुकृतसुहृदं दुर्लभं जीवलोकं,
लब्ध्वा सर्वव्यसन शमनं मित्रमेकम् विवेकं ।
धन्याः केचित्कृत कुमुदिनीकान्तलेखावतंसं,
हंसं शंसंत्यमलमधुरैर्भक्तिसिक्तैर्वचोभिः ॥२९॥

अंतःशून्यं गुणविरहितं नीरसं सर्गहीनं
काव्यं हृद्यं ननु सुमनसां न स्थलांभोरुहाभम् ।
तत्रापीशः श्रवणपुलिने गाढरागानुबन्ध–
प्रोद्यद्भक्ति प्रगुणित मदःकर्तुमर्हत्यगर्हम् ॥३०॥

अथवाऽमृतबिंदुवर्षिणीन्दु–
द्युतिरानन्दममन्दमर्पयन्ती ।
नयति ध्रुवमार्द्रतामियं गी–
र्गिरिजाजीवितनाथमिन्दुकान्तम् ॥३१॥

इति श्रीजगदरभट्टविरचिते
भगवतो महेश्वरस्य स्तुति कुसुमाञ्जलौ
स्तुति प्रस्तावः



२

श्रीमदाचार्यवरोत्पलदेवविरचितं

नमस्कारस्तोत्रम्

श्लो० ॐनमः परमार्थैकरूपाय परमात्मने
स्वेच्छावभासितासत्यभेदभिन्नाय शम्भवे ।

अग्नीषोम[1] रविब्रह्मविष्णुस्थावर जङ्गम–
स्वरूप बहुरूपाय नमः संविन्मयायते ।

नानाविधवर्णानां रूपं दत्तो यथा अमलः स्फटिकः
सुरमानुषपशुपादपरूपत्वं तद्वदीशोऽपि ॥१॥

नमःशिवाय निःशेष क्लेश प्रशमशालिने ।
त्रिगुणग्रन्थिदुर्भेद भवबन्ध विभेदिने ॥२॥

1. अग्नि सोम (?)

नमः समस्तगीर्वाणकिरीट घटिताङ्घ्रये ।
जगन्नगरनिर्माण नर्मशर्मदकर्मणे ॥३॥

नमस्तमस्वतीकांतखण्डमाण्डितमौलये ।
तापांधकारनिर्वेद खेदविच्छेदवेदिने ॥४॥

नमस्समस्त संकल्पकल्पनाकल्पशाखिने ।
विकासि कलिकाकांत कलापाय स्वयंभुवे ॥५॥

नमस्तमः पराभूत भूतवर्गानुकम्पिने ।
श्वेतभानु बृहद्भानु भानुभासित चक्षुषे ॥६॥

नमःशमनहुंकारकातरातुर हर्षिणे ।
भवायभवदावाग्नि विविश्रामृतवर्षिणे ॥७॥

नमःसमद कंदर्पदर्पज्वरभरच्छिदे ।
दुर्वारभवरुग्भङ्गभिषजे वृषलक्ष्मणे ॥८॥

नमो जन्मजरामृत्युभीतिसातङ्कपालिने ।
करुणामृतसंपर्कपेशलाय कपालिने ॥९॥

नमोनिसर्गनिर्विघ्न प्रसादामृतासिन्धवे ।
संसारमरुसन्तापतापितापन्नबन्धवे ॥१०॥

नमःसान्द्रामृतस्यन्दि घनध्वानितशोभिने ।
महाकालाय भीष्मोष्मभवग्रीष्मक्लमच्छिदे ॥११॥

नमोवाङ्मनसातीतमाहिम्ने परमेष्ठिने ।
त्रिगुणाष्टगुणा[1]नन्त गुणानिर्गुणमूर्तये ॥१२॥

(दया सर्वेषुभूतेषु क्षान्तिरक्षेतरस्यच ।
अनसूया तथा लोके शौचमन्तर्बहिस्तथा ।
अस्पृहाच परस्त्रीषु परस्वेषुच सर्वदा
अष्टात्मगुणाप्रोक्ताः पुराणेषुतुकोविदैः ॥)

हंसायदीर्घदोषान्तकारिणेऽम्बरचारिणे ।
स्वमहोमहिमध्वस्तसमस्ततमसे नमः ॥१३॥

(हंसोविहङ्गभेदेस्यादर्कविष्णौ हयान्तरे ।
योगि मंत्रादिभेदेषु परमात्मनिमत्सरे ॥इति विश्वः)

---

1. बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म —अष्टगुण ।

यःसुवर्णेन चन्द्रेणगाङ्गेयेनाग्निजन्मना ।
काञ्चनेनाश्रियंधत्ते तस्मैस्मरजिते नमः ॥१४॥

निजाङ्गभङ्गभङ्ग्यापि भक्तानुग्रहकारिणे ।
नमःस्तम्भितजम्भारिभुजस्तम्भाय शंभवे ॥१५॥

निःसामान्याय मान्याय न्यायमार्गोपदेशिने ।
मूर्धन्याय वदान्याय धन्याय स्वामिने नमः ॥१६॥

नमःसंहृतकालाय कालायसगलत्विषे ।
गङ्गाधौतकलापाय कलाऽपायमविन्दते ॥१७॥

जिष्णुना जिष्णुना लोकान्विष्णुनाप्रभविष्णुना ।
ब्रह्मणा[1]ब्रह्मणाद्येन स्तुतायस्वामिने नमः ॥१८॥

कुलशैलदलं[2] पूर्णसुवर्णगिरिकर्णिकम् ।
नमोऽधितिष्ठतेऽनन्तनालं कमलविष्टरम् ॥१९॥

---

1. वेदत्रयी । 2. अष्टपर्वतदलं, मेरुगिरिकर्णिकम्–भूलोक एव कमलं । ब्रह्मरूपायमहेश्वराय नमः ।

(हिमवान्निषधोविन्ध्योमाल्यवान्पारियात्रकः
गंधमादन सह्यौच नीलश्च कुलपर्वताः ॥)

निमित्तमन्तरेणा[1]पियः सपंकजनाभये ।
प्रवर्त्ततेविभुस्तस्मै नमः पंकजनाभये[2] ॥२०॥

नमःसोमार्द्धदेहाय सोमार्द्धकृतमौलये ।
श्वेताभयसमुद्भूत श्वेताभयशसे नमः ॥२१॥

विनतानन्दनं नागविग्रहोग्रमुखं दृशा ।
विनायक[3]मुपासीनं भजते स्वामिने नमः ॥२२॥

नमो ब्रह्महरित्र्यक्ष श्रवसे भवसेतवे ।
जगत्सर्गस्थितिर्ह्लासहेतवे वृषकेतवे ॥२३॥

कार्णिकादिष्विवस्वर्णमर्णवादिष्विवोदकम् ।
भेदिष्वभेदियःतस्मै परस्मै महसे नमः ॥२४॥

---

1. निमित्तंविना, 2. सृष्टेःस्थित्यर्थं विष्णुरूपाय शिवाय,
3. गरुडः ।

यमेकमेव श्रयतो न जायते स्पृहा परस्मै महतोपि नाकिने[1] ।
नमःसमस्तापदुपेतपालनव्रताय तस्मैविभवे पिनाकिने ॥२५॥

विधौ जगत्सर्गविधौयदाहितं, प्रतिष्ठितं यत्स्थितिकारणेविधौ ।
समूढ गूढार्थविधौ लयेचयत्परायतस्मै महसे नमोनमः ॥२६॥

नमःसमुत्पादिततारकद्विषे, नमस्त्रिधामाश्रित तारकत्विषे ।
नमोजगत्तारक पुण्यकर्मणे, नमोनमस्तारकराजमौलये ॥२७॥

नमोनमस्तेऽमृतभानुमौलये ।
नमोनमस्तेऽमृतसिद्धिदायिने ॥
नमोनमस्तेऽमृतकुंभ पाणये ।
नमोनमस्तेऽमृतभैरवात्मने ॥२८॥

नमस्तमः पारपराध्यवृत्तये ।
नमस्समस्ताध्व विभक्तशक्तये ॥
नमःक्रमव्यस्त समस्तमूर्त्तये ।
नमःशमस्थापित भक्तिमुक्तये ॥२९॥

---

1. देवाय ।

विजय जयप्रदाय शबराय वराय नमः
सकल कलंकसंकरहराय हराय नमः।
जगदगदप्रगल्भविभवाय भवाय नमः
प्रवरवर प्रकाशित शिवाय शिवाय नमः ॥३०॥

नमस्कारस्तोत्रं

सम्पूर्णम्

